P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-2) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारत में आदिवासी समाज और संस्कृति

सारांश

आदिवासी समाज भारत में अपनी पहचान के तौर पर जाना जाता है। वह प्रकृति का प्रेमी होता है। आधुनिकता के नाम पर उनकी पहचान को नष्ट किया जा रहा है। मार्डन नाईजेशन के नाम पर उनकी जमीन और जंगल के अधिकार छीनकर उद्योगों की स्थापना कर उनका मूल जीवन समाप्त कर दिया। जिससे आदिवासी लोग बडे–बडे आन्दोलन करने पर मजबूर हुए सरकार को पुनः एक सामजस्य बनाकर आदिवासी और प्रकृति यानि वनों आदि को बचाना होगा। जहॉ पर एक तरफ वन महोत्सव चलाकर पेड लगाये जाते है सड़क और उद्योगों के नाम पर उन्हें नष्ट किया जा रहा है। इसकी पुनः समीक्षा की जाए।

मुख्य शब्द : आदिवासी, जनजाति, प्रकृति, जादू–टोने, आदि।

पवन कुमार
रिचर्स स्कॉलर
पी. डी. एफ. आई. सी. एस. एस. आर. (एस. डी. पी. जी. कॉलेज, गाजियाबाद, यू.पी.,)
भारत

प्रस्तावना

आदिवासी समाज और संस्कृति के बारे में सोचने पर हमारे दिमाग में एक अलग ही परिभाषा आती है कि वे गरीब एवं दीनहीन और बहुत पिछडे और समाज से बहुत अलग–थलग है। हमारे समाज का आदिवासी के प्रति दृष्टिकोण बहुत ही अलग है कि उनका अर्द्धनग्न रहन–रहन, मनोरजन के प्राकृतिक तरीके, उनके घर, खाना–पीना ये सब चीजें सामान्यः लोगों का ध्यान आकर्षित करती है। इसके विपरीत उनके पारिवारिक जीवन की मानवीय व्यथा के बारे में जानने का कोई प्रयास नहीं करता। दूसरा उनके अलौकिक विश्वास, जादू–टोने, विलक्षण अनुष्ठानों का आँखों देखा हाल तो मिलता है, उनकी जिन्दगी के हर सिम्त हाड़तोड़ संघर्ष की बहुरूपी और प्रमाणिक तस्वीर नहीं वे आज भी आदमी की अलग नस्ल के रूप में दिखाये जाते है। आदिवासी समाज से हमारा तात्पर्य है कि जो बहुत समय से एक निर्धारित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करते है। उनके अपनी संस्कृति है। आदिवासी समाज के लोग अपनी सभ्यता और संस्कृति के बडे प्रेमी होते है। वे अपनी परम्परा और रीति रिवाज के अनुसार अपना जीवन जीते है। भारत में आदिवासी जनजाति में संथाल, मुंडा, प्रमुख है। ये छोटा नागपुर का पठार आदिपर इनका निवास स्थान है। छोटा नागपुर का पठार अपने प्राकृतिक सम्पदा और खनिजों से भरपूर है। आधुनिकता के इस युग में जहॉ उद्योग, निवेश, आदि बहुत जरूरी है। इन्हीं उद्योग, और फैक्ट्री आदि के चक्कर में उन्हें आदिवासी समाज को उखाड देना भी गलत है। क्योकि आदवासी जगलों में रहना पंसद करते है और उन्हें वहॉ से उजाड देना उनकी अपनी संस्कृति के खिलाफ है। इसी कारण आज आदिवासी समाज धरने प्रदर्शन आदि करते है। वे पंसद नहीं करते अपनी सभ्यता, संस्कृति में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन हो। इन सब बातों से एक बार फिर विकास की मौजूदा अवधारणा का पुनः अवलोकन करना होगा। आधुनिक कार्य–शैली में पुनः जनजातीय और आदिवासी समूह की रक्षा की जाए। संस्कृति से हमारा अभिप्रायः है कि जिसमें धर्म और भौतिक साधनों के साथ–साथ आध्यात्मिक और पारम्परिक वेशभूषा, प्राचीन परम्परा, पूजा–विधान आदि का सभावेश किया जाता है। आदिवासी संस्कृति के लोग आन्तरिक प्रकृति पर अपनी विजय श्री के साथ–साथ उनकी सभ्यता प्राकृति पर वाह्य विजयश्री का समावेश है। अनेक विद्वानों एवं समाजशास्त्रीयों ने संस्कृति की अनेक परिभाषाए दी है। किसी ने सामाजिकता के आधार पर व्याख्या की है तो किसी ने जन्म के आधार पर किसी ने उनके परम्परागत रहन–सहन ने आधार पर परन्तु एक बहुत प्रसिद्ध समाज शास्त्री ने टायलर के अनुसार संस्कृति वह जटिल ईकाई है जिसके अन्तर्गत अभ्यास सम्मलित है जिन्हें मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में अर्जित करता है। इस प्रकार कहा जा सकता हे कि संस्कृति सामाजिक परम्परा से अलग इसमें चितंन, अनुभव और व्यवहार आदि का मिश्रण है। इससे मिलती जुलती अनेक विद्वानों ने

परिभाषाएँ दी है। सब क्षेत्र एवं जाति की अपनी अपनी संस्कृति है। कही लाल रंग शोक का निशान है तो कही चेरों की जाति में दक्षिण दिशा का हिन्दू धर्म में एक पतित्व को आदर्श मानती है तो मुसलमानों में बहुपत्नित्व आदर्श भी है। ये सब धर्म और जाति के रूप में अलग–अलग क्षेत्रीय समानताए और असमानताए है। आदिवासी समाज के लोग प्राथमिक और प्राकृतिक धरातल पर जीवन यापन करते है। वे अपने छोटे–छोटे झुण्डों में रहते है। निश्चित क्षेत्र और कम लोगों के कारण ये लोग अपनी संस्कृतियों को बनाए रखते है। आदिवासी लोगों के रीति रिवाज को बनाए रखते है। आदिवासी लोगों के रीति रिवाज भी बिल्कुल अलग है। इनके अपने त्यौहार पर पारम्परिक नृत्य और शराब आदि का चलन महत्वपूर्ण है। आदिवासी का अपना धर्म सरना है जो प्रकृति का धर्म है। वह पेड़ों और अपने पूर्वजों की तथा उसकी स्मृति बनाए रखने हेतु वह उन पर पत्थर लगाता है– जिन्हें वह ससन कहता है और उनकी पूजा करता है। 'ससन' पर उस पूरे समाज, पूरे समूह का हक होता है। वे इन 'ससन' यानी पत्थरों को ही अपनी जमीन के पट्टे की तरह मानता है। उसका धर्म उसका नियम है, इसलिए वह व्यवहारिक है। उसका बोंगा (देवता) और कोई नही, उसका पूर्वज ही है जो उसका मित्र भी है ओर अपने सुख–दुख में शामिल होने के लिए भी उसे ही आमंत्रित करता है। वह किसी भगवान को नही स्वीकारता, न देवता को मानता है। वह केवल 'स्पिरिट' की अवधारणा पालता है, जो अच्छी भी हो सकती है ओर बुरी भी। आदिवासी कभी भी अपने आप को हिंदू नहीं कहता। वह अपनी पहचान अपने धर्म से नहीं कराता। यह पूछे जाने पर कि, ''तुम कौन हो?'' बताता है ''मैं आदिवासी हूँ।'' और अपने टोटम या गोत्र– जो कि पेड़–पौधे, पशुओं या जीवों के नाम पर होते हैं को अपने परिचय में जोड़ देता है। वह औरों की तरह धर्म से जोड़कर, जैसे–हिंदू, मुसलमान या ईसाई कहकर अपना परिचय नही देता। अब एक सोची–समझी चाल के तहत उसका हिंदुत्वकरण किया जा रहा है। छल–कपट से अथवा फुसलाकर हिन्दुओं के देवता से जोड़ा जा रहा है। कही उसका रिश्ता राम से जोड़ा जाता है तो कही शिव से और उसे अपनी ही समूह के लोगों के खिलाफ भडकाया जा रहा है जो कि वर्चस्ववादी हिंदुओं के जातीय भेदभाव भरे व्यवहार से तंग आकर धर्म–परिवर्तन कर चुके है। उड़ीसा में यह क्रम लगातार जारी है। मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और झारखंड में ''घर वापसी'' अभियान जोर–सोर से चलाए जा रहे है यानी, जो पहले हिन्दू रहा हो बाद मे आदिवासी सरना या ईसाई बन गया हो और अब पुनः हिन्दू बन रहा है। यह कितना झूठ है जो कि उस पर थोपा जा रहा है। आदिवासियों को यह नही बताया जा रहा है कि उसे इस घर वापसी के आयोजन के बाद हिंदुओं के जातियों में विभाजित समाज के सबसे निम्न दर्ज पर दाखिला दिया जा रहा है। उसे सेवकों की जातियों में स्थान दिया जाएगा। इस प्रकार उनका मूल नाम और मूल धर्म, जोकि वास्तव में उसकी जीवन–शैली ही हैं, छीनकर उसे हिंदू समाज में विभाजित जमात की सीढ़ी के सबसे निचले स्थान पर बिठाया जा रहा है। इतिहास पर भी नजर दौड़ाई जाए तो स्पष्ट हो जाता है कि महाभारत काल से ही इनका शोषण होता आया है। क्योंकि आर्यो को यह बात नागवार गुजरती थी कि कोई भी अनार्य अपने स्वाभिमान के साथ जिंदा रह पाए। वे खुद को ही सर्वश्रेष्ठ मानते थे। अनार्य उनकी दृष्टि में मनुष्यता का दर्जा पाने के हकदार ही नहीं थे। वे असुर थे, राक्षस थे, दानव थे और सब विकृतियों, दुर्गुणों से लैस ओर बदसूरती के प्रतीक थे। पशुओं के सींग, पूंछ और लंबे–लंबे दांत उन पर मढ़ दिए गए थे। जिसने राम का विरेाध किया उसे राक्षस करार दिया गया। जिन्होनें राम की सहायता की और साम्राज्य बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई उन्हें भी बंदर, भालू, गरूड ही कहा गया, मनुष्य नहीं। कोई भी आदिवासी ने जब भी इनकी सेवा की या उसके आगे समर्पण किया या उनकी गुलामी स्वीकार की तो उसे स्वामिभक्त–सेवक का दर्जा दे दिया गया उसे कभी भी समकक्ष नही माना गया। जब भी कोई आदिवासी उनसे अधिक चतुर या विद्वान होता तो उसे मारने की या नीचा दिखाने की साजिश रच दी जाती है। आदिवासियों की जमीन तो छीनी ही गई, उनसे जंगल के अधिकार भी छिन गए। गैर आदिवासी लोगो के बसने की वजह से अब उनकी भाषा भी छिन रही है क्योंकि, उनकी भाषा को समझने वाला अब वहॉ पर कोई है ही नहीं। यह तो सर्वविदित है कि जब भाषा का खतरा होगा तो संस्कृति भी नहीं बच पाएगी। उनके नृत्य को लोग अजीब नजरों से देखते है। उनका अपना धर्म 'सरना' है पर उन पर नए–नए भगवान थोपे जा रहे हैं उनकी सस्कृति या तो हंड़पी जा रही है या मिटाई जा रही है। यह कहा जा सकता है कि संस्कृति नष्ट करने का इनका तरीका अलग–अलग है। कहीं संरक्षण, विकास या किसी एक प्रलोभन के नाम पर तो कहीं दादागिरी के बल पर हिंदू संस्कृति को आदिवासियों के बीच रमाने में जुटे है। जिन भागों में आदिवासियों ने खास विरोध नहीं किया पर जहॉ–जहॉ इन्होंने विरोध किया वहॉ आज भी आदिवासी संस्कृति कायम है। हर धर्म अपना–अपना धर्म थोपने को तैयार है। ईसाईयों ने भी यह कहकर कि आदिवासियों को शिक्षा देगें, जागरूक बनाएंगे, उनके बीच काम करना शुरू किया। हालांकि उन्होंने आदि वासियों इलाके में बड़े पैमाने पर स्कूल खोलें, बच्चों को जागरूक किया पर इनकी सारी चीजों के आड़ में इन्होने आदिवासियों को ईसाई धर्म सिखाने का भी काम किया। इन आदिवासियों को एक प्रकार से उनके जीवन, उनकी संस्कृति को छोडकर ईसाई धर्म और संस्कृति को आत्मसात करने के लिए बाध्य या प्रेरित किया जाता गया और बहुत अधिक संख्या में आदिवासियों को ईसाई धर्म में खींच लाया जाता है। इस प्रकार आदिवासियों को कल्याण और विकास का सपना दिखाकर धर्म में लाने का सिलसिला जारी है। हर धर्म वालों को एक होड़ सी लग गई है कि किसे आदिवासियों का बडा हिस्सा मिल जाए और इसके लिए सभी धर्म वाले यहीं कहते है कि ''हमारे धर्म में आओं, हम तुम्हारें प्रश्न हल करेंगें।'' इस प्रकार, अब आदिवासी सिर्फ और सिर्फ हिस्सा–बॉट कर लेने लायक कोई वस्तु बन गए है। उदाहरण के तौर पर गुजरात को भी देखा जा सकता हैं यहॉ आदिवासियों के हिंदुत्वीकरण का अभियान

जोर–शोर से चल रहा है। गुजरात के दांग जिले के सुबबिर नामक छोटे से गॉव की चमक डोंगर नामक पहाडी पर तीन पत्थरो की पूजा शिवार देव (फसलों के रक्षक) के रूप में की जाती थी। अब इन पत्थरों को संघ परिवार द्वारा यह बताया जा रहा है कि यहॉ पर ही बैठकर राम ने शबरी के जूठे बेर खाए थे। अब इस पहाड़ी के ऊपर शबरी का बड़ा भारी मंदिर बनाया गया है। अभी कुछ साल पहले तक आदिवासियों के लिए शबरी एक अनजाना नाम था क्योंकि बाल्मीकि रामायण, तुलसी रामायण से काफी अलग है। अब ऐसा कहा जा रहा है कि दांग दरअसल रामायण के दण्डकारण्य का अपभ्रंश है। केवल दांग और दण्डकारण्य शब्दों के बीच समानता के आधार पर ही यह नई बात प्रचारित की जा रही हें मंदिर का निर्माण सागौन के पेडों को काटकर किया गया है और धर्म के नाम पर इन आदिवासियों की जमीन पर भी कब्जा किया जा रहा है। इसके अलावा संरक्षित व असंरक्षित वनों की भी बडे पैमाने पर कटाई की जा रही हैं यह कार्य वहॉ के ही स्थानीय बडे ठेकेदार के नेतृत्व में हो रहा है। आदिवासियों के हिंदुत्वीकरण का अभियान बहुत ही योजनाबद्ध तरीके से चलाया जा रहा है। आदिवासियें की दंतकथाओं व परंपराओं को तोडना मरोडना इस अभियान का महत्वपूर्ण हिस्सा है। दांग एक अत्यंत ही गरीब पिछड़ा इलाका है, इसलिए वहॉ की असली जरूरत गरीबी और अशिक्षा के विरूद्ध अभियान चलाना है। आदिवासियें पर अपने वर्चस्व को लेकर विभिन्न धर्मो में आपसी प्रतिस्पर्धा भी है। क्योंकि जब ईसाई मिशनरियां इन जगहों पर शिक्षा का अभियान चलाती हैं तब यह संघ–परिवार विहिप, हिंदू जागरण मंच के समर्थकों को रास नही आता क्योंकि, इस वजह से उनके लिए आदिवासियों का शोषण करना मुश्किल होता है ओर होता जा रहा है। संघ–परिवार द्वारा यह भी फैलाया गया कि ईसाई मिशनरी धोखे से और लालच देकर आदिवासियों को ईसाई बना रहे हैं। इन्होंने यह भी तर्क दिया कि आदिवासी दरअसल हिंदू है ओर इसलिए उन्हें ईसाई बनाने से हिंदू धर्म खतरे में पड़ जाएगा पर, असली मुद्दा यह नहीं है कि आदिवासी हिंदू हैं या ईसाई। मुद्दा यह है कि ईसाई मिशनरी आदिवासियों को जागृत कर रहे है और शिक्षा इन आदिवासियों को शोषण के रूिद्ध लडने का हथियार दे रही है। अतः आदिवासी समुदाय अपने पारंपरिक अधिकारों पर हो रहे आक्रमण का विरोध कर रहे हैं जो कि संघ–परिवार कतई बर्दाश्त नहीं कर सकता। यही, त्रिशूली दीक्षा जैसे कार्यक्रमों और हिंदू जागों, कस्ती भागों जैसे नारों के पीछे का असली कारण है। संघ–परिवार का लक्ष्य ही है कि वे आदि वासियों के सांस्कृतिक पुनर्जागरण के नाम पर उन्हें उनके अधिकारों को पाने से रोकें व आदि वासी समुदाय को अशिक्षित और बदहाल बनाए रखने में सफल हो सकें। संविधान द्वारा भारत को एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र घोषित किया गया है फिर भी भारतीय राजनीति में धर्म की एक विशेष भूमिका हे। हम धर्म निरपेक्ष राष्ट्र की स्थापना तो कर पाये हैं, किन्तु धर्म निरपेक्ष समाज की नहीं। धार्मिक विभिन्नता के कारण समाज में विभिन्न प्रकार के तनावों को बढाने में राजनीतिज्ञ भी भूमिका अदा करता है। इससे उनके स्वार्थ सिद्ध होते है। बी0जी0 गोखले जैसे अनेक व्यक्तियें ने आशा व्यक्त की थी कि राजनीति से धर्म के अलग हो जाने पर हिन्दू और मुसलमानों के पुराने विरोध फिर कभी उत्पन्न नही होगें। किन्तु पिछले 66 वर्षे से गुजरात, बिहार, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश राज्यों में हुई घटनाएं इस बात का सबल प्रमाण हैं कि साम्प्रदायिक वैमन्सय अभी भी विद्यमान हैं, जो छोटी छोटी घटनाओं से भभक उठता हैं और भारत की राजनीति एवं शासन उससे आक्रान्त हो उठते है।

अध्ययन का उद्देश्य

21वीं सदी में जहॉ पूरी दुनिया विकास की और अग्रसर है वहीं पर आदिवासी समाज अपनी मूल संस्कृति को बनाए रखे हुए हैं और समाज की मुख्य धारा से नही जुड पा रहे है। परिणामस्वरूप आज भी उनमें अशिक्षा, बेरोजगारी, रूढिवादिता, अंधविश्वास जैसी कुरीतियॉ बनी हुई है। जबकि सरकार ने उनके उत्थान एवं विकास के लिए अनेक परियोजना चलायी है। लेकिन अपनी मानसिक यर्मीणता अधंविश्वास और अशिक्षा आदि के कारण से सामाजिक मुख्य धारा में पिछडे हुए हैं। अध्ययन का मूल उद्देश्य आदिवासी समाज की मूल समस्याओं को उजागर कर उनका निकारण करना है। जिससे वे समाज की मुख्य धारा से जुड सकें।

निष्कर्ष

वर्तमान समय आधुनिकता का युग है जिसमें विभिन्न समाज परम्परागत मूल्यों को त्यागकर राजनैतिक आधुनिकीकरण की ओर अग्रसर है जिससे मिश्रित संस्कृति का उदय हो रहा है परन्तु आदिवासी समाज आज भी समाज की मुख्यधारा से नही जुड पाया है जिसका मुख्य कारण अपिक्षा, गरीबी, अंधविश्वास और परम्परागत संस्कृति को बनाए रखना। जब तक ये इन कुरीतियों का त्याग नही करते इनका विकास सम्भव नही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

पी. आर नायडू, भारत के आदिवासीविकास की समस्याएं, राधा पबिलेकेशन नई दिल्ली 2002।

नदीम हसनैन, जनजातिय भारत, तृतीय संस्करण, जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रब्यूटर्स, नई दिल्ली।

ब्रहमदेव शर्मा, आदिवासी स्वशासन, प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली, 2002।

उदयसिंह राजपूत, आदिवासी विकास एवं गैर सरकारी संगठन।

रमणिका गुप्ता (संपा.) आदिवासी कौन? राधा पबिलेकेशन नई दिल्ली।

डा0 रामदयाल मुण्डा, अस्तित्व के लिए संघर्षख आदिवासी साहित्य का मुख्य सरोकार (आदिवासी सम्मेलन, रांची में अध्यक्षीय वक्तव्य), युद्धरत आम आदमी।

विनायक तुमराम, आदिवासियों की अब तक की साहित्य यात्रा, रमणिका गुप्ता (संपा.)।

पृथ्वी मांझी, भारतीय वाडमय में आदिवासी का विकृत रूप बदलना होगा (अतिथि वक्तव्य), युद्धरत आम आदमी।